

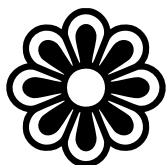
वीर सधेशी



मधेश एकीकरण के नायक,
लौहांग सैन (राज्यारोहण ई. १५५३)

डा. सी. के. राउत

वीर सधेशी



डा. सी. के. राउत

प्रथम संस्करण, २०७० साल अगहन
© टेक्स्ट: सर्वाधिकार लेखक में सुरक्षित

प्राप्त जानकारी के मुताबिक सार्वजनिक प्रयोग के लिए उपलब्ध या आपत्ति नहीं होने वाली तस्वीरें ही इस किताब में प्रयोग की गई हैं। आपत्ति होने पर तस्वीर ओनर कृपया लेखक को सूचित करें। विस्तृत जानकारी एवम् सन्दर्भ सामग्री के लिए डॉ. सी. के. राउत द्वारा लिखित 'मधेश का इतिहास' ग्रन्थ देखें।

वीर मधेशी हम

वीर मधेशी हम, मधेश के रहनेवाले
संस्कृति अपनी, भाषा-वेश निराले

धरती हरी यह स्वर्ग सी देख
कहीं नहीं भूमि ऐसी नेक
मेची काली मध्य चुरिया हैं रखवाले
वीर मधेशी हम, मधेश के रहनेवाले

मनु जनक बुद्ध सलहेश
हरिसिंह लोहांग का देश
अमर इतिहास अपना, बड़े शानवाले
वीर मधेशी हम, मधेश के रहनेवाले

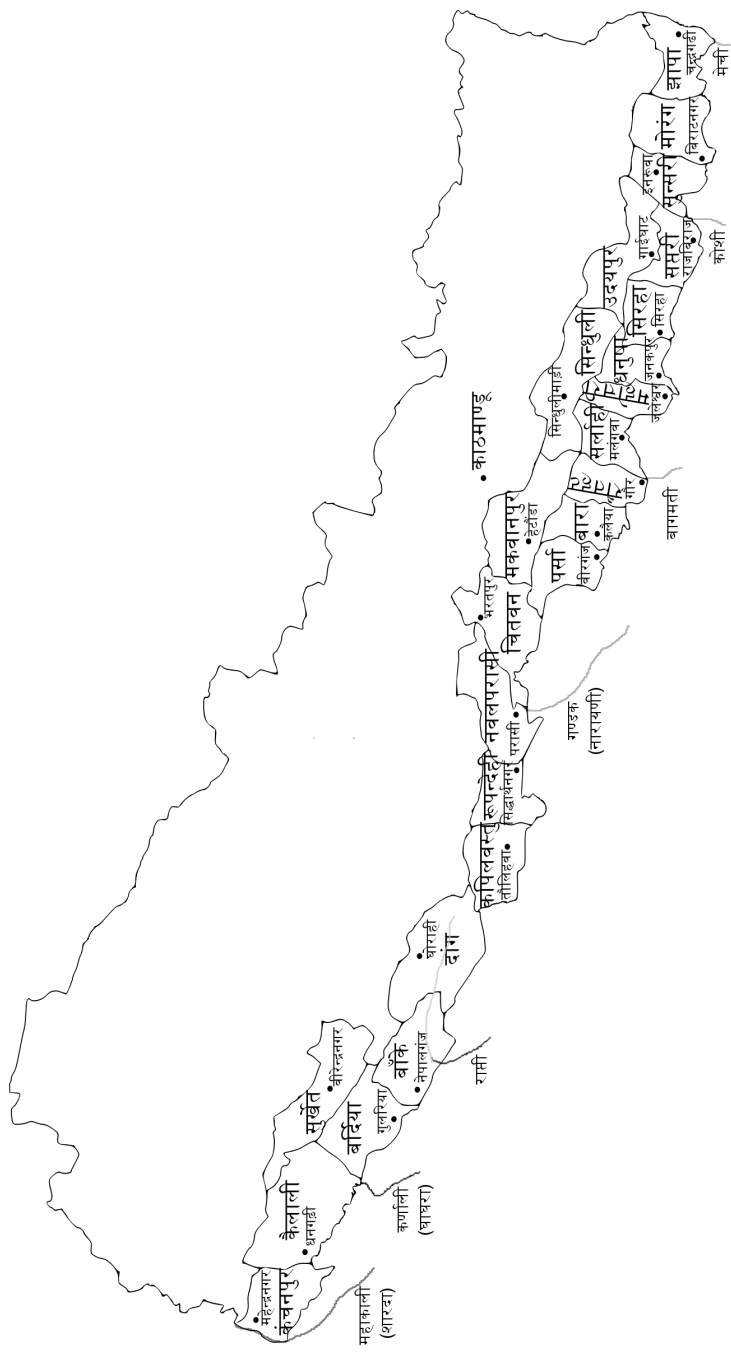
दुर्गानंद मुनेश्वरी वीर अनेक
वीरेन रमेश गुल्जार थनेत
जान देंगे, यह शीश न झुकनेवाले
वीर मधेशी हम, मधेश के रहनेवाले



विषय-सूची

१	बुटवल रामापिथेकस	३
२	मनु: मध्यदेश के प्रथम राजा	४
३	इक्ष्वाकु	५
४	जनक	६
५	सीता	७
६	राजा विराट	९
७	शाक्य और कोलिय	१०
८	सिद्धार्थ गौतम (बुद्ध)	१२
९	महाराज बिम्बिसार	१४
१०	अजातशत्रु	१५
११	सम्राट चन्द्रगुप्त और अशोक	१६
१२	सम्राट समुद्रगुप्त	१८
१३	सलहेश	१९
१४	धर्मपाल	२०
१५	नान्यदेव	२१
१६	हरिसिंहदेव	२३
१७	बादशाह अकबर	२५
१८	मुकुन्दसेन	२६
१९	लोहांगसेन	२८
२०	नवाब और अंग्रेज	२९

२१ जयप्रकाश ठाकुर (मल्ल)	३१
२२ दांग के राजा	३४
२३ गोरखाली ज़िमीदार का षड्यन्त्र	३५
२४ ई. १८१४-१६ की लड़ाई	४०
२५ ई. १८१६ का विश्वासघात	४२
२६ ई. १८६० का पुरस्कार	४४
२७ आज़ादी आन्दोलन के मधेशी वीर	४६
२८ वीरगंज के वीर	५०
२९ रौतहट के वीर मधेशी किसान	५१
३० विराटनगर के वीर	५२
३१ बेलुवा के वीर	५४
३२ शहीद दुर्गानन्द झा	५६
३३ मधेश मुक्ति आन्दोलन के वीर	५७
३४ शहीद वीरेन राजवंशी	५९
३५ रघुनाथ ठाकुर	६०
३६ रामराजा प्रसाद सिंह	६१
३७ शहीद मुनेश्वरी देवी यादव	६३
३८ गजेन्द्र बाबू	६५
३९ शहीद कमल गिरी	६६
४० शहीद रमेश महतो	६८
४१ शहीद मो. बिस्कुट मियाँ	६९
४२ शहीद धन बहादुर थारू	७१



मधेश

मधेश पूरब में मेची नदी से लेकर पश्चिम में महाकाली (शारदा) नदी तक फैला हुआ है। इसके उत्तर में शिवालिक (चुरिया) पर्वत है। चुरिया पर्वत के नीचे का समतल भूभाग ही मधेश है। इसको पहले 'मध्यदेश' कहा जाता था। 'मध्यदेश' से ही 'मधेश' नाम बना है।

मधेश का क्षेत्रफल लगभग २३,०६८ वर्ग किलोमीटर है। मधेश में मेची, कनकाई, कोशी, कमला, बागमती, गण्डक (नारायणी), राप्ती, बबई, कर्णाली (घाघरा) और महाकाली (शारदा) नदियाँ बहती हैं। यहाँ का मौसम गर्म है।

मधेश में झापा, मोरंग, सुन्सरी, सप्तरी, सिरहा, धनुषा, महोत्तरी, सर्लाही, रौतहट, बारा, पर्सा, चितवन, नवलपरासी, रूपन्देही, कपिलवस्तु, दांग, बाँके, बर्दिया, कैलाली और कंचनपुर जिले पड़ते हैं। मधेश में कुछ समतल घाटियाँ भी पड़ती हैं। उसे भीतरी मधेश कहा जाता है। भीतरी मधेश के कुछ हिस्से उदयपुर, सिन्धुली, मकवानपुर और सुर्खेत जिले में पड़ते हैं।

मधेश की जनसंख्या लगभग सवा एक करोड़ है। मधेश में अनेकों जात-जातियाँ हैं। यहाँ के लोग मुख्य रूप से





हिन्दू, इस्लाम, सिख और बौद्ध धर्म मानते हैं। यहाँ पर पर्व-त्यौहारों में से जुड़शीतल, चौरचन, जितिया, दशमी, सुखराइत, सामा-चकेवा, नेमान, तिला संक्राइत (माघी), फगुवा (होरी), नाग-पंचमी, जनउ पूर्णिमा (रक्षा-बन्धन), छठ, विवाह-पंचमी, राम-नवमी, बुद्ध जयन्ती, गुरु नानक और गुरु गोविन्द जयन्ती, इद, रमादान, अशुरा (मोहर्रम) आदि मनाए जाते हैं।

मधेशी लोग मैथिली, भोजपुरी, थारू, अवधि, वज्जिका, उर्दू, राजवंशी, हिन्दी, सन्थाली, मुसलमानी जैसे मध्यदेशीय भाषा बोलते हैं। मधेश में पुरुष लोग प्रायः धोती, कुर्ता, गंजी, लूंगी आदि पहनते हैं तो महिलाएँ साड़ी और कुर्ता-सलवार पहनती हैं।



बुटवल रामापिथेकस

करोड़ों वर्ष पहले की बात है। तभी मानव का विकास नहीं हुआ था। उस समय मधेश के चुरिया क्षेत्र में मानव के पूर्वज प्राणी घूमा करते थे। ऐसे ही एक प्राणी रामापिथेकस का अवशेष मधेश के बुटवल से मिला है। वह १ करोड़ १० लाख वर्ष पुराने होने की बात वैज्ञानिकों ने बताई। समय बीतने के साथ मानव का विकास हुआ।



आदिम मानव जंगलों में विचरण करते थे। वे शिकार करके खाते थे। उसके लिए वे पत्थरों के हथियार बनाते थे। आदिम मानवों के ऐसे हथियार मधेश के बर्दिया, दांग, नवलपरासी, महोत्तरी, मोरंग, झापा आदि जिलों से मिले हैं। नवलपरासी जिले की दण्डा नदी के किनारे से जावा-मानव और पेकिंग-मानव के हथियार मिले हैं। दांग घाटी से आदिम मानव के अनेकों सूक्ष्म हथियार प्राप्त हुए हैं।

आदिम मानव को अनेकों कठिनाइयों से लड़ना पड़ा। उसे कई हिमयुग पार करना पड़ा। कई भीषण वर्षा और बाढ़ को झेलना पड़ा। फिर भी उसने वीरतापूर्वक अपने जीवन की रक्षा की।

मनु: मध्यदेश के प्रथम राजा

विशाल जलप्लावन के बाद जब पृथ्वी पुनः बसने योग्य हो गई तो वैवस्वत मनु ने मध्यदेश में अपना राज्य स्थापित किया। उसने शासन-व्यवस्था का विकास किया।

मनु ने अयोध्या नगरी बसाई और उसी को राजधानी बनाकर मध्यदेश पर राज्य किया। मध्यदेश की चर्चा और सीमा का विवरण मनुस्मृति (२-२१) में मिलता है—

हिमवद्विन्ध्ययोर्मध्ये यत्प्राग्विनशनादपि ।

प्रत्यगेव प्रयागाच्च मध्यदेशः प्रकीर्तितः ॥

अर्थात् हिमालय से लेकर विन्ध्य पर्वत के बीच तथा पूर्व में प्रयाग और पश्चिम में विनाशन (सरस्वती) नदी तक फैली भूमि ही मध्यदेश है।

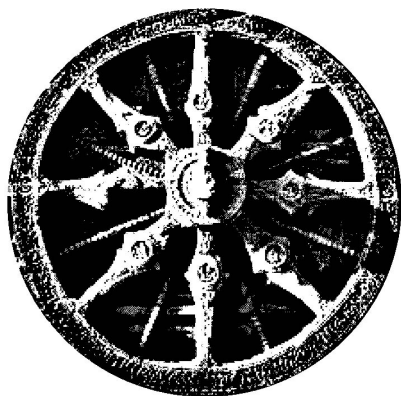
मनु ने अपने अन्तिम काल में मध्यदेश को अपनी संतानों में बाँट दिया। उसके बाद मध्यदेश में काशी, कोसल और विदेह राज्य का उदय हुआ। वहाँ पर उसके पुत्र, पुत्री और पौत्रों के वंशों ने राज्य किया।



इक्ष्वाकु

मनु के नौ पुत्रों में से ज्येष्ठ इक्ष्वाकु ने इक्ष्वाकु या सूर्य वंश की शुरुआत की। इक्ष्वाकु कोसल देश के राजा हुए। उनकी राजधानी अयोध्या थी।

इक्ष्वाकु वंश में श्रावस्त पैदा हुए। उन्होंने श्रावस्ती नगरी बसाई। इसी वंश में चक्रवर्ती सम्राट मान्धाता हुए। वे सप्तद्वीप पृथ्वी के विजेता कहलाते थे। सूर्योदय से लेकर सूर्यास्त तक के सारे प्रदेश मान्धाता के राज्य में थे। उनके वंश में चक्रवर्ती सगर का भी जन्म हुआ। उत्तरापथ की ओर बढ़ते हुए उन्होंने शक, यवन, किरात, पहलव और पारदों का नाश किया। इसी वंश में कोसल के राजा रघु, अज और दशरथ भी हुए।



पाठ ४

जनक

मध्यदेश के राजा इक्ष्वाकु के बेटे निमि हुए और निमि के बेटे मिथि। मिथि ने विदेह में अपना राज्य कायम किया। उन्हीं के नाम से मिथिला नामाकरण हुआ। इसी वंश में शीरध्वज जनक पैदा हुए। उनकी राजधानी जनकपुर थी।

शीरध्वज जनक के शासनकाल में मधेश की सभ्यता उच्च कोटी की थी। मधेश ज्ञान-विज्ञान और धनधान्य का केन्द्र था। वहाँ पर विद्वान-विदुषियों की सभा, गोष्ठी, शास्त्र चर्चा, प्रश्नोत्तर और शास्त्रार्थ होते रहते थे। अश्वल, जरत्कारव, याज्ञवल्क्य, भुज्यू, लाह्यायनी, मैत्रयी, कहोउ, गार्गी वाचक्रवी, उद्दालक, आरुणि जैसे दिग्गज हस्तियाँ मधेश में थीं। ऋषि-महर्षि तपस्या करने, रहने और शास्त्रार्थ करने आते थे। उसी क्रम में पूरब की तरफ विश्वामित्र, पश्चिम में वाल्मीकि, उत्तर में याज्ञवल्क्य और दक्षिण में गौतम और विभाण्डक ऋषियों ने अपनी कुटियाँ बनाई थीं।

शीरध्वज जनक ने अपने भाई कुशध्वज को नेपाल पर शासन करने के लिए भेजा था।



पाठ ५ सीता

शीरध्वज जनक के समय में मधेश में बहुत बड़ी अनावृष्टि हो गई। गुरुओं की सलाह पर शीरध्वज जनक खेत जोतने निकल पड़े। वहाँ उन्हें एक परित्यक्त बालिका मिली। जनक ने उसे गोद ली और राजकुमारी के रूप में पालन-पोषण किया। राजकुमारी सीता के विवाह के लिए जनकपुर में स्वयंवर का आयोजन किया गया। वहाँ पर अनेकों देश के राजा-महाराजा और राजकुमार पधारे। दरबार में रहे धनुष पर प्रत्यंचा चढ़ाने वाले वीर से विवाह होने की शर्त रखी गई। अन्ततः अवध (कोसल) के राजकुमार दाशरथी राम के हाथों वह धनुष टूटा और सीता का विवाह उन्हीं के साथ हुआ।

सीता ने अपने जीवन में अनेकों कष्ट झेले, पर वीरांगना की तरह वे तनिक न घबराईं। वे अपने पति राम के साथ वनवास भी गईं। वहाँ पर उनका अपहरण लंका के राजा रावण ने किया। अन्ततः राम द्वारा रावण मारा गया। लंका के राजा रावण पर विजय पाकर राम बत्तीस वर्ष की आयु में कोसल के राज्य सिंहासन पर बैठे और सीता महारानी बनीं।

सीता और राम के पुत्र कुश और लव हुए। कुश कोसल में स्थापित हुए। उन्होंने कुशावती को राजधानी बनाई। लव की राजधानी श्रावस्ती हो गई।



पाठ ६

राजा विराट

महाभारतकालीन समय में मधेश में राजा विराट का राज्य था। उनकी राजधानी विराटनगर थी। उनका दरबार वर्तमान विराटनगर शहर से १० किलोमीटर दक्षिण-पूर्व गोव्हा में था। उस जगह को भेडियारी भी कहा जाता है। वहाँ पर राजा विराट के दरबार का भग्नावशेष मौजूद है।

उधर झापा के पृथ्वीनगर गाँव में मेची और देउनिया खोला के संगम पर किचकवध है।

महाभारत के अनुसार मत्स्यदेश के राजा विराट के दरबार में पाण्डव गोप्यवास के लिए आए थे। उस समय भीम ने उसी स्थान पर सेनापति कीचक का वध कर दिया था।

उसी तरह झापा के शनिश्चरे बाजार से पश्चिम में अर्जुनधारा है। एक बार कौरवों ने राजा विराट की गौओं का अपहरण कर लिया था। उस समय अर्जुन के साथ कौरवों का घमासान युद्ध हुआ। अर्जुन ने गौओं को कौरवों से छुड़ाकर लाया। प्यासी गौओं को पानी पिलाने के लिए उसने वाण प्रयोग करके जमीन से पानी निकाला। उस जगह पर अभी भी जमीन से पानी निकल रहा है।



शाक्य और कोलिय

ईसा पूर्व ६०० के आसपास मध्यदेश में महाजनपदों का उदय हुआ। उनमें से काशी, कोसल, मल्ल और वृजि संघ मधेश पर राज्य करते थे। उस समय मधेश में विदेह राज्य नहीं था, बल्कि उसके स्थान पर वृजि संघ था। उसकी राजधानी वैशाली थी। वृजि संघ लिच्छवी, विदेह और ज्ञातृक सहित आठ कुल मिलकर बने थे। वह एक गणराज्य था। उसके राज्य प्रमुख जनता द्वारा चुने जाते थे। मल्ल भी गणतन्त्र ही था।

महाजनपदों के अलावा मधेश में अन्य कई छोटे-छोटे गणतन्त्र थे। उनमें से कपिलवस्तु के शाक्य और देवदह के कोलिया गणतन्त्र भी आते थे।

कपिलवस्तु गणराज्य की राजधानी तिलौराकोट थी। वह कपिलवस्तु जिले के तौलिहवा के समीप पड़ता है। कपिलवस्तु में शाक्यवंशीय शुद्धोदन नाम के राजा हुए। शुद्धोदन का विवाह कोलिय राज्य के राजा अंजन की पुत्री राजकुमारी महामाया और प्रजापति गौतमी के साथ हुआ था।



तस्वीर: तिलौराकोट दरवार का भग्नावशेष, कपिलवस्तु

रोहिणी नदी से पूर्व रहे कोलिय गणतन्त्र एक शक्तिशाली राज्य था। रूपन्देही के देवदह और नवलपरासी के रामग्राम इसी राज्य में पड़ते थे। देवदह को कोलिय राज्य की राजधानी मानी जाती है।

शाक्य और कोलिय शासक इक्ष्वाकु वंश के थे।



पाठ ८

सिद्धार्थ गौतम (बुद्ध)



कपिलवस्तु में शाक्यवंशीय राजा शुद्धोदन और रानी महामाया के पुत्र के रूप में सिद्धार्थ गौतम का जन्म ५६३ ईसा पूर्व में हुआ।

मगधेश अर्थात् मज्झिमदेश में बुद्ध का जन्म होने के विषय में बौद्ध ग्रन्थों में लिखा गया है—“दस हजार योजन की सीमा वाले भारत उपमहादेश तो विशाल है, इसके कौन से देश में बुद्ध को जन्म लेना होगा?” उसने विचार किया और मज्झिमदेश में ही जन्म लेने का निर्णय किया। ‘उसी देश में बुद्ध, प्रमुख शिष्य और अस्सी महान शिष्य सभी पैदा हुए, और उसी देश के कपिलवस्तु में बुद्ध को जन्म लेना होगा’

कहके उसने निर्णय किया।” रानी महामाया जब अपने नैहर कोलिय राज्य देवदह जा रही थीं, तो रास्ते के लुम्बिनी के बगीचे में सिद्धार्थ का जन्म हुआ था।

सिद्धार्थ गौतम का विवाह कोलिय गणनायक शुपबुद्ध की बेटी यशोधरा से हुआ। उनका राहुल नाम का पुत्र भी हुआ। पुत्र के पैदा होने के बाद २९ वर्ष की उम्र में सिद्धार्थ राजदरबार को त्याग कर तपस्या करने निकल पड़े। पहले राजगृह में जाकर भिक्षा माँगते हुए उन्होंने अपना तपस्वी जीवन शुरू किया। मगध नरेश बिम्बिसार को सिद्धार्थ के विषय में मालूम होने पर वे उन्हें मिलने गए। उन्होंने सिद्धार्थ गौतम को मगध के राजसिंहासन पर बैठने के लिए विनती की। पर सिद्धार्थ ने अस्वीकार किया। अन्ततः ३५ वर्ष की उम्र में सिद्धार्थ को बोधगया में एक वृक्ष के तले सम्यक सम्बोधि प्राप्त हुई। उसके बाद वे बुद्ध के नाम से जाने गए।

बुद्धत्व प्राप्ति के बाद उन्होंने अपनी पहली शिक्षा सरनाथ में दी। उसके बाद वे मध्यदेश और उससे दूर-दूर भी भ्रमण करते हुए अपने ज्ञान को फैलाते रहे। मध्यदेश की सीमा का विवरण बौद्ध ग्रन्थों में निम्न प्रकार दिया गया है—“पूर्व में गजंगल शहर के इस पार जिसके उस पार महासाला है, दक्षिणपूर्व में सल्लवती नदी के इस पार, दक्षिण में सेतकणिक शहर के इस पार, पश्चिम में ब्राम्हणों की बस्ती थूण के इस पार और उत्तर में उसीरद्धज पर्वत के इस पार।” बौद्ध ग्रन्थों के अनुसार मध्यदेश की लम्बाई तीन सौ योजन, चौड़ाई दो सौ पचास योजन और सीमा नौ सौ योजन है।

बुद्ध का देहान्त ४८३ ईसा पूर्व में कुशीनगर में हुआ।



महाराज बिम्बिसार

ईसा पूर्व ५४५ में मगध में बिम्बिसार राजा हुए। उन्होंने आरम्भ से ही राज्य विस्तार की नीति ली। उन्होंने पड़ोसी राज्यों को अपने राज्य में मिलाया। उन्होंने कोसल और वैशाली के राजपरिवारों से वैवाहिक सम्बन्ध कायम किया। वैशाली से विवाह-सम्बन्ध होने से नेपाल की सीमा तक मगध के फैलाव के लिए रास्ता खुल गया। उन्होंने राजगीर नगर का निर्माण भी किया। उनके समय में बुद्ध और जैन तीर्थाकर महावीर ने अपने मत का प्रचार किया। वे वृद्धावस्था में अपने ही पुत्र अजातशत्रु द्वारा मारे गए।



अजातशत्रु

बिम्बिसार के बाद उनके पुत्र अजातशत्रु मगध साम्राज्य के राजसिंहासन पर बैठे। उनका शासनकाल शान्त नहीं रहा। मगध की रानी के शोक से मरने के बाद उनके भाई कोसलराज प्रसेनजित् मगध से बदला लेने के लिए तत्पर हुए। उधर मगध के उत्तर और उत्तर-पश्चिम की गणतांत्रिक जातियाँ भी मगध से ऊबकर काशी-कोसल के साथ



मिलकर अजातशत्रु के विरुद्ध में खड़ी हो गईं। लिच्छवी, वृजि और मल्ल सभी से मगध को लड़ना पड़ा। अजातशत्रु ने लिच्छवियों को हराया और वैशाली और विदेह को अपने साम्राज्य में मिला लिया। कोसलराज प्रसेनजित् को भी काशी छोड़ना पड़ा। मञ्जुश्री मूलकल्प के अनुसार अंग, मगध और वाराणसी तथा उत्तर में वैशाली तक अजातशत्रु का राज्य था।

अजातशत्रु के समय में बुद्ध की मृत्यु के पश्चात् राजगृह में बौद्धों की संगीति हुई और बौद्ध ग्रन्थ लिपीबद्ध हुए।



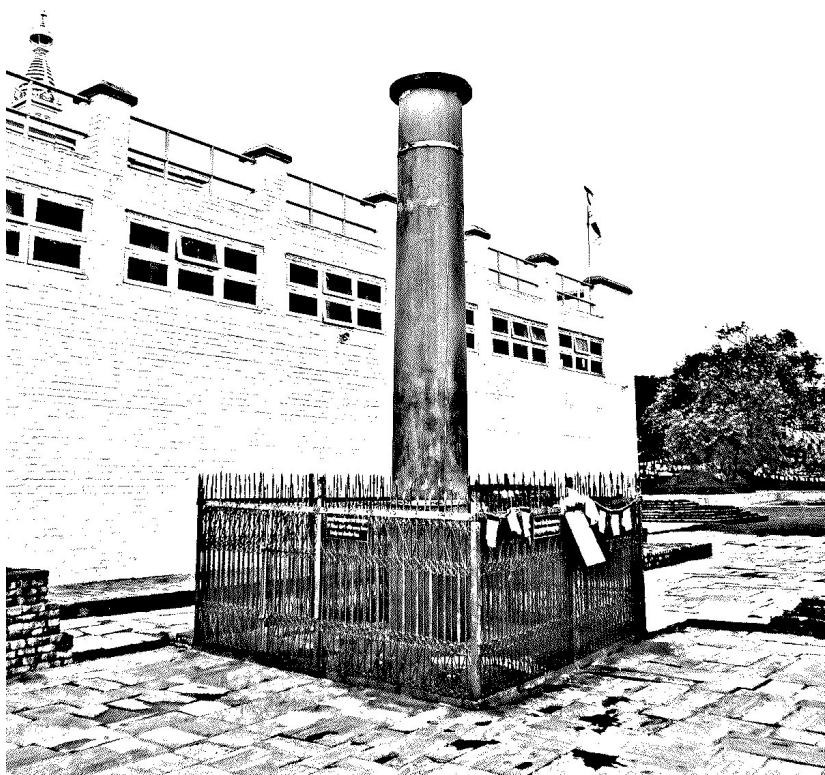
सम्राट चन्द्रगुप्त और अशोक

ईसा पूर्व ३२७ की तरफ सिकन्दर की मकदूनियाई सेना ने मध्यदेश की भूमि पर चढ़ाई कर दी। उसे रोकने के लिए आचार्य चाणक्य ने युवक चन्द्रगुप्त के नेतृत्व में सेना खड़ी की। चन्द्रगुप्त मौर्य मधेश के पिप्पलिवन के रहने वाले थे। वे मयूर-पोषकों, चरवाहों और शिकारियों के बीच पले-बड़े थे, पर बहुत ही बहादूर



थे। वे बहुत बहादूरी के साथ सिकन्दर की सेना से लड़े। उसके बाद उन्होंने मगध की राजगद्दी भी प्राप्त की। उन्होंने मध्यदेश में बहुत बड़ा साम्राज्य कायम किया।

चन्द्रगुप्त मौर्य के बाद उनके पुत्र बिन्दुसार गद्दी पर बैठे। बिन्दुसार के बाद अशोक का राज्याभिषेक हुआ। अपने राज्याभिषेक के आठ वर्षों के बाद कलिंग को जीतने के पश्चात् मौर्य साम्राज्य चारों ओर फैल गया। सम्राट अशोक का साम्राज्य उत्तर में कश्मीर और नेपाल की घाटियों तक था। सम्राट अशोक ईसा पूर्व २४९ में बुद्ध के जन्मस्थल लुम्बिनी पधारे। उन्होंने वहाँ पर स्तम्भ खड़ा किया और वहाँ की जनता का भूमिकर भी कम कर दिया।



तस्वीर: लुम्बिनी अशोक स्तम्भ और मायादेवी मन्दिर, रूपन्देही

सम्राट समुद्रगुप्त



तीसरी-चौथी सदी ईस्वी में मध्यदेश में गुप्तों का शासन था। इस वंश के तीसरे शासक चन्द्रगुप्त प्रथम ने महाराजाधिराज की उपाधि धारण की थी। उन्होंने लिच्छवी राजकुमारी कुमारदेवी से विवाह किया था। उनकी मृत्यु तक में गुप्त वंश का आधिपत्य प्रयाग, अवध और दक्षिण बिहार (मगध) तक फैल चुका था। चन्द्रगुप्त की मुद्राओं पर उनकी महारानी की मूर्ति तथा मुद्रा की पीठ पर लिच्छवयः लिखा हुआ मिलता है।

चन्द्रगुप्त के बाद सम्राट समुद्रगुप्त ने शासन किया। उन्होंने अपने राज्य को प्रयाग से लेकर सैहलक तक फैलाया। समुद्रगुप्त के अभिलेखों में मध्यदेश के बहुत से राजाओं के नाम मिलते हैं, जिनका उन्मूलन उन्होंने किया।



पाठ १३
सलहेश



पाचवीं-छठी सदी ईस्वी के बीच में जयवर्धन सलहेश मधेश के राजा हुए। वे जाति के दुसाध थे। उनकी राजधानी सिरहा जिले के महिसौथा में थी। उस काल में मधेश पर उत्तर की ओर से तिब्बतियों के आक्रमण होते रहते थे। सलहेश ने उन सबसे मधेश को सुरक्षित किया। इसलिए उनका नाम सलहेश अर्थात् शैलेश के भी राजा पड़ा। उनके पिता नरपत नरेश थे और माता मन्दोदरी थीं। मोतीराम और बुंदेश्वर उनके भाई थे। दीना और भद्री नामक दो भाई उनके मित्र थे। वे मंगल महावत के हाथी पर सवार होते थे। सिरहा जिले में सलहेश मन्दिर, सलहेश फुलवारी और सलहेश गहवर मौजूद है।



पाठ १४
धर्मपाल



आठवीं सदी में मध्यदेश का माहौल अशान्त था। मध्यदेश में एक पर एक शासक आए, पर अराजकता की स्थिति बनी रही। अन्ततः जनता ने गोपाल नामक एक सरदार को गद्दी पर बैठाया। उसके साथ पाल वंश का आरम्भ हुआ।

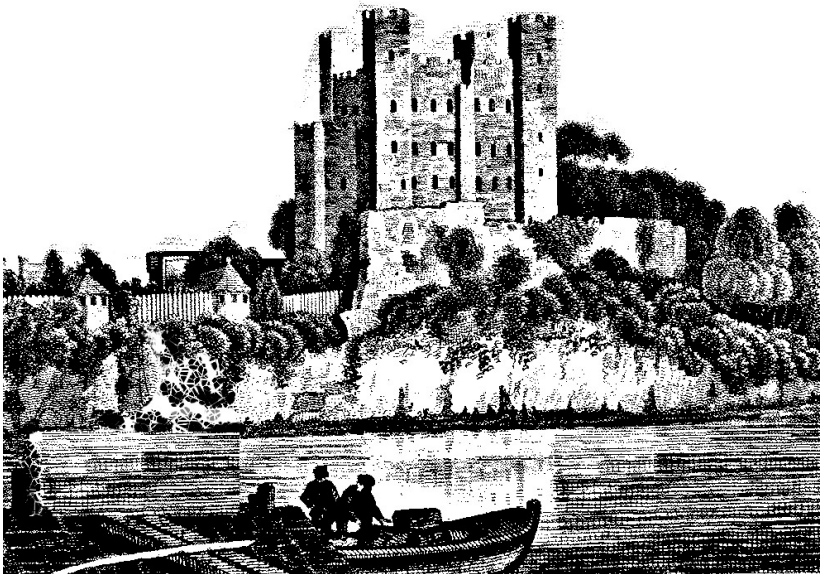
गोपाल के पुत्र धर्मपाल लगभग ७८० ईस्वी में राजगद्दी पर बैठे। वे हिमालय से लेकर दक्षिण में गोकर्ण तक सम्पूर्ण देश के विजेता बने। उनके पुत्र देवपाल ने पश्चिम के प्रतिहारों और दक्षिण के द्रविड़ों के साथ लड़ाई जारी रखी। उनकी सेना ने हूणों पर भी विजय हासिल की। उनका राज्य हिमालय से लेकर सेतुबन्ध रामेश्वर तक फैला हुआ था।



नान्यदेव

ईस्वी १०९७ में मधेश में राजा नान्यदेव ने अपना शासन कायम किया। उनके राज्य को तीरभुक्ति या तिरहुत भी कहा जाता था। उनकी राजधानी बारा जिले के सिमरौनगढ़ थी। उनके समय में मधेश बहुत ही शक्तिशाली था।

नान्यदेव ने पहले नान्यपुरी में विशाल नगर का निर्माण किया। पर बाह्य आक्रमण के डर के कारण चुरिया पर्वत के बगल में अपनी राजधानी बनाने का फैसला किया। उसके लिए सिमरौनगढ़ को चुना। सिमरौनगढ़ में दुर्ग, दरबार, मन्दिर, गढ़ी, रास्ता, सभा-गृह और लोग जमा होने के लिए



रंगभूमि आदि का निर्माण किया। सिमरौनगढ़ में व्यापक शहरीकरण हुआ था। वहाँ की सभ्यता बहुत ही विकसित थी। सिमरौनगढ़ व्यापार का केन्द्र था। ईस्वी ११११ में मधेशी राजा नान्यदेव ने विशाल सेना लेकर नेपाल पर आक्रमण किया और कब्जा जमाया।

नान्यदेव के बाद उस वंश में गंगादेव, नरसिंहदेव, रामसिंहदेव, शक्तिसिंहदेव, भूपालसिंहदेव और हरिसिंहदेव राजा हुए।



पाठ १६
हरिसिंहदेव

हरिसिंहदेव मधेश के प्रतापी राजा थे। उन्होंने बार-बार नेपाल पर आक्रमण करके वहाँ पर मधेशियों का आधिपत्य जमाया। मधेशी सेना का नेतृत्व हरिसिंहदेव के मन्त्री चण्डेश्वर ठाकुर करते थे। ईस्वी १३१४ में उनका युद्ध नेपाल के राजा रुद्र मल्ल से हुआ। युद्ध के उपरान्त मधेशियों ने



नेपाल पर कब्जा किया।

ईस्वी १३२४ में दिल्ली के बादशाह गयासुद्दीन तुग़लक़ बंगाल से तिरहुत के रस्ते होकर लौट रहे थे। राजा हरिसिंहदेव ने सोचा कि गयासुद्दीन तुग़लक़ तिरहुत पर आक्रमण करने आ रहे हैं। इसलिए वे अपनी सेना लेकर उनसे लड़ने के लिए निकल पड़े। गयासुद्दीन तुग़लक़ की सेना से बहुत बड़ा युद्ध हुआ। अन्त में तिरहुत का शासन मलिक तुब्लिध के बेटे अहमद खान को सौंपकर बादशाह दिल्ली लौट गए।

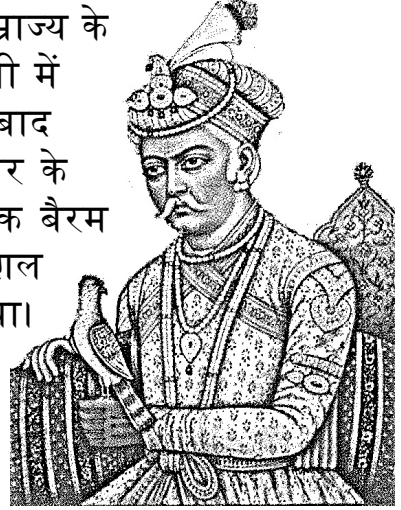
उधर राजा हरिसिंहदेव उत्तर की ओर पलायन हुए। उन्होंने फौज इकट्ठा की और अपनी सेना लेकर नेपाल पर आक्रमण कर दिया। नेपाल में उन्होंने अपने वंश का शासन पहले भादगाँव (भक्तपुर) में स्थापित किया, और बाद में पूरे नेपाल घाटी में फैलाया। वे अपने साथ अपनी कुलदेवी तुलजा भवानी को भी नेपाल लाए थे। वह काठमाण्डू में तलेजु के नाम से जानी जाती है।

चीन के सम्राट मधेशी राजाओं को नेपाल के पूर्ण सत्ताधारी राजा मानते थे। वे उनसे राजनयिक सम्बन्ध रखे हुए थे।



बादशाह अकबर

बादशाह अकबर मुग़ल साम्राज्य के महान सम्राट थे। १५५६ ईस्वी में अपने पिता हुमायूँ की मृत्यु के बाद १३ वर्ष की उम्र में ही अकबर के हाथों में शासन आया। संरक्षक बैरम खान के नेतृत्व में अकबर ने मुग़ल साम्राज्य को स्थायी रूप दिया। अपने शासन काल में वे मुग़ल साम्राज्य का विस्तार करते रहे। उन्होंने मध्यदेश के उत्तर में सबसे दूरतम क्षेत्रों को भी



मुग़ल साम्राज्य में मिलाया। मधेश के मिथिला क्षेत्र से कर उठाने के लिए बादशाह अकबर ने ईस्वी १५७७ में पंडित महेश ठाकुर को नियुक्त किया था।

बादशाह अकबर को कला और साहित्य में भी बहुत अभिरुचि थी। वे सभी धर्म और विचारों का आदर करते थे। विभिन्न धर्म के धर्मशास्त्रियों को नियमित बुलवाकर वे शास्त्रार्थ करवाकर सुनते थे।



मुकुन्दसेन

१५-१६वीं सदी ईस्वी में मधेश में सेन राजाओं का राज्य था। सेन राजाओं का दरबार पहले रूपन्देही जिले के बुटवल में था। उसका भग्नावशेष अभी भी बुटवल के पार्क में संरक्षित है। दक्षिण और पश्चिम की ओर से बार-बार होते रहे आक्रमण से बचने के लिए बाद में सेन राजाओं ने थोड़ा उत्तर जाकर सुरक्षित जगह पर अपनी राजधानी बनाई।

सेन वंश में मुकुन्दसेन बहुत ही प्रतापी राजा हुए। उनका राज्यकाल ईस्वी १५१८-१५५३ माना जाता है। मधेश में पूरब से पश्चिम तक उन्होंने अपने राज्य को फैलाया। उन्होंने राजधानी 'मुकुन्दपुर' बनवाई। बाद में वह 'मकवानपुर' कहलाया।



तस्वीर: मकवानपुरगढ़ी किला

मुकुन्दसेन ने ईस्वी १५२५ और १५२६ में नेपाल पर आक्रमण करके विजय हासिल की थी। इसलिए उनका राज्य नेपाल की घाटी और पहाड़ी इलाकों में भी था। मुकुन्दसेन के राज्य के विषय में हिमवत्खण्ड पुराण में लिखा गया है—

पर्वत, मध्यदेशे च नेपाले च नराधिप ।

मकवानीय वंशोयं तेन लोकः प्रकाशति ॥

अपने जीवन के अन्तिम काल में मुकुन्दसेन ने अपना विशाल राज्य अपने बेटों में बाँट दिया। उनके बड़े बेटे विनायकसेन को बुटवल का राज्य मिला, तो विहंगीसेन को चितवन/तनहुँ का। सबसे छोटे बेटे लोहांगसेन को बारागढ़ी/मकवानपुरगढ़ी राज्य मिला।



पाठ १९ लोहांगसेन

राजकुमार लोहांगसेन मुकुन्दसेन के सबसे छोटे बेटे थे। वे लोहे जैसा मजबूत और बलवान थे। उनके पिता ने उन्हें पूरब की ओर राज्य प्रशासन के लिए भेजा। पूरब में उन्होंने, मेची नदी से भी पूर्व, टिष्टा नदी तक के छोटे-छोटे राज्यों पर विजय हासिल करके मधेश का एकीकरण किया।

अपने पिता मुकुन्दसेन की मृत्यु के बाद ईस्वी १५५३ में वे बारागढ़ी अर्थात् मकवानपुरगढ़ी राज्य के राजा हुए। वह

राज्य चितवन से लेकर टिष्टा नदी तक फैला हुआ था। उनके राज्य में वर्तमान झापा, मोरंग, सुन्सरी, सप्तरी, सिरहा, धनुषा, महोत्तरी, सर्लाही, रौतहट, बारा, पर्सा, मकवानपुर और चितवन जिले के भाग आते थे।



नवाब और अंग्रेज

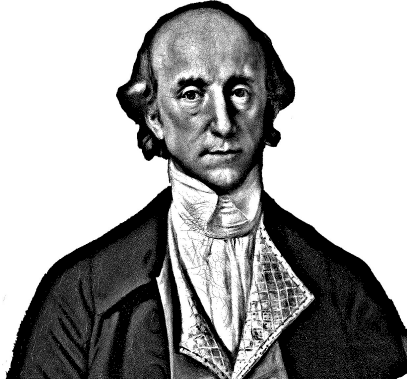
ईस्वी १६६४ में मुग़ल बादशाह औरंगजेब ने दरभंगा और गोरखपुर से दो सैनिक दल मधेश के राजा पर आक्रमण करने के लिए भेजे। उसके उपरान्त मधेश पर मुग़ल आधिपत्य कायम होने पर बादशाह को कुछ नजराना और हाथी भेजे गए। मधेश के राजा मुग़ल बादशाह को हरेक वर्ष चौदह हाथ खड़े दो हाथी मालवाजवी* देकर बारागढ़ी/मकवानपुरगढ़ी राज्य पर शासन करते रहे। मधेश में जंगली हाथी बहुत मिलते थे। मुग़ल बादशाहों को हाथी बेहद पसन्द होने के कारण, मालवाजवी के रूप में वे हाथी ही लेते आए थे।

बादशाह औरंगजेब की मृत्यु के बाद मुग़ल साम्राज्य लगभग छिन्न-भिन्न हो गया। बंगाल-बिहार और अवध के नवाब-वजीर लगभग स्वतन्त्र रूप से अपनी रियासतें चलाने लगे। इसलिए बादशाह के बाद, मधेशी राजाओं से मालवाजवी लेने का अधिकार नवाब-वजीर तक आ गया। बाद में नवाब-वजीर हाथी के बदले रुपये भी लेना शुरू कर दिए। वह राशी बढ़ते-बढ़ते वार्षिक १२,५०० रुपये हो गई थी। पटना में रहे नवाब-वजीर के मुग़ल-प्रशासक वह रकम प्रतिवर्ष वसूल किया करते थे।

चितवन से दक्षिण बेतिया सीमा तक के मधेश का क्षेत्र मधेश के राजाओं को बंगाल-बिहार के नवाब-वजीर से जमीन्दारी के रूप में मिला था। उसी तरह, पश्चिम में बुटवल और स्यूराज सहित का क्षेत्र मालपोत चुकाने की शर्त पर

*राज्य के बदले देते आए निश्चित कर

मधेशी राजाओं ने अवध के नवाब-वजीर से लिया था।



बाद में बंगाल-बिहार और अवध पर ईष्ट-इंडिया कम्पनी के अंग्रेज पदाधिकारियों का अधिकार स्थापित हुआ। उसके बाद मधेश से मालवाजवी वसूल करने का अधिकार भी अंग्रेज अधिकारियों के पास चला गया। उसी क्रम में, अंग्रेजी कप्तान किनलोक केवल पर्सा, बारा और रौतहट जिले से वार्षिक २४ हजार रुपये मालपोत रकम वसूल करते आए थे।



जयप्रकाश ठाकुर (मल्ल)



ईस्वी १७५७ में गोरखालियों ने नेपाल के कीर्तिपुर पर प्रथम आक्रमण किया। उस समय में नेपाल में कान्तिपुर के राजा जयप्रकाश मल्ल थे। राजा जयप्रकाश मल्ल मधेशी थे। कान्तिपुर और ललितपुर के राजा महीन्द्रसिंह के देहान्त के बाद वहाँ के शक्तिशाली मंत्री झगल ठाकुर ने ईस्वी १७२२ में मधेशी जगज्जय ठाकुर को गद्दी पर बैठाया था। वे जगज्जय “मल्ल” के नाम से जाने गए। उसी जगज्जय मल्ल (ठाकुर) के बेटे जयप्रकाश मल्ल थे। मधेशी होने के नाते जयप्रकाश मल्ल के पास विशाल मधेशी सेना हुआ करती थी। उस मधेशी सेना से पृथ्वी नारायण शाह की गोरखाली सेना का युद्ध हुआ।

कीर्तिपुर के युद्ध में गोरखाली सेनापति कालु पाँडे मारे गए। गोरखालियों की बुरी तरह हार हुई। गोरखालियों में

भागमभाग मच गई। स्वयं पृथ्वी नारायण शाह भी बालबाल ही बच पाए थे। वे पालकी में बैठकर युद्ध संचालन कर रहे थे। जयप्रकाश मल्ल के एक सैनिक ने उसे पहचान लिया और उन पर खूँडा से प्रहार किया। पर बीच में ही 'राजा तो अवध्य होते हैं' कहके दूसरे सिपाही साथी ने उसका हाथ पकड़ लिया। सिपाहियों ने पृथ्वी नारायण शाह को जीवनदान देकर छोड़ दिया। पृथ्वी नारायण शाह भागकर नुवाकोट गए। उस युद्ध में जयप्रकाश मल्ल के मधेशी सिपाहियों की भी बहुत क्षति हुई।

ईस्वी १७६४ में गोरखालियों ने कीर्तिपुर पर फिर से आक्रमण किया, पर वे पुनः बुरी तरह पराजित हुए। अन्ततः उन्होंने ईस्वी १७६६ में वहाँ के मुखिया को मिलाकर षड्यन्त्रपूर्वक रात को प्रवेश-द्वार खुलवा लिया। गोरखाली सैनिक चुपके से कीर्तिपुर घुसे और अपना झंडा फहरा दिए।



इस तरह से धोखा देकर पृथ्वी नारायण शाह कीर्तिपुर घुसे। वहाँ पर उन्होंने अपनी पराजय का बदला लेने के लिए कीर्तिपुर के सारे नागरिकों के होंठ और नाक काटने का आदेश दिया। बच्चों और महिलाओं को भी नहीं छोड़ा गया। उन्होंने कीर्तिपुर का नाम 'नककटा का देश' रखने के लिए भी आदेश दिया।

ईस्वी १७६८ में इन्द्रजात्रा के तीसरे दिन मध्य-रात में जब नेपाल के लोग आमोद-प्रमोद करके सो रहे थे, तब गोरखाली सैनिक षड्यन्त्रपूर्वक कान्तिपुर घुस गए और अपना आधिपत्य जमाए। राजा जयप्रकाश मल्ल ने मधेश के राजा कर्णसेन से सैन्य सहायता भी माँगी थी। मधेश से कुछ सैनिक और घोड़े नेपाल पहुँच भी चुके थे। ईस्वी १७६९ में जयप्रकाश मल्ल के साथ गोरखालियों का भयानक युद्ध हुआ। जयप्रकाश मल्ल वीरतापूर्वक गोरखालियों से लड़े। पर उनके पैर में गोली लगी और अन्ततः उन्होंने आर्यघाट पर अपना दम तोड़ा।



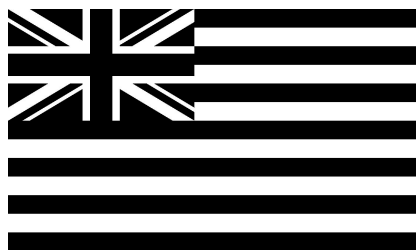
दांग के राजा

पश्चिम मधेश के दांग-देउखुरी में थारू राजाओं का राज्य हुआ करता था। उनमें राजा दंगीशरण बहुत ही प्रतापी थे। उनका दरबार दांग के सुकौरा में होने की बात बताई जाती है। वहाँ से कुछ प्राचीन बर्तन और भग्नावशेष भी मिले हैं।

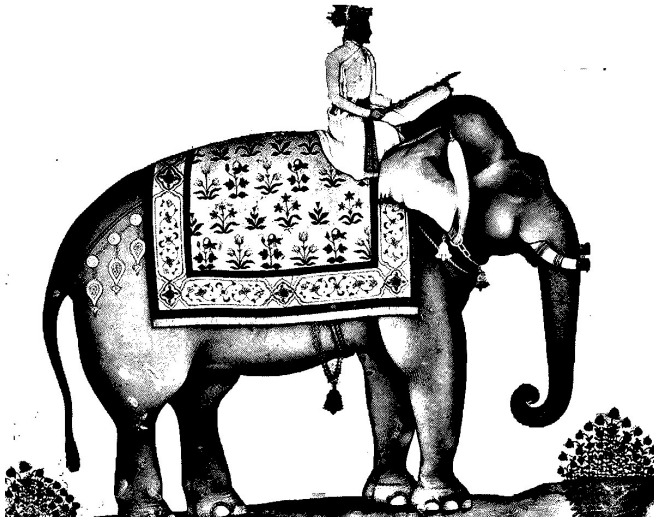
गोरखालियों की चढ़ाई के समय में दांग-देउखुरी में राजा नवलसिंह का राज्य था। ईस्वी १७६० में जब वे अपने राज्य के दक्षिणी भाग के दरबार में थे, गोरखालियों ने दांग पर आक्रमण कर दिया। बदला लेने के लिए ईस्वी १७८६ में उन्होंने गोरखालियों से युद्ध किया। उनका बेटा राजकुमार दिलेरसिंह पूरे राज्य पर पकड़ बनाकर नहीं रख सके। केवल अपने आधे राज्य अर्थात् तुलसीपुर के तराई क्षेत्र ही बचा पाए। दिलेरसिंह वहीं के राजा हुए। देउखुरी क्षेत्र गोरखालियों के आधिपत्य में चला गया। वह पृथ्वी नारायण शाह की बेटी को विर्ता के रूप में दिया गया।



गोरखाली जिमीदार का षडयन्त्र



गोरखाली शासकों की आँखें समृद्ध और सुसम्पन्न मधेश पर बहुत पहले से गड़ी हुई थीं। इसलिए गोरखालियों ने मकवानपुर पर आक्रमण कर दिया। पर मधेश अंग्रेजों के संरक्षण में था। इसलिए गोरखाली शासक मकवानपुर पर कब्जा जमाने की बात सोच भी नहीं सकते थे। इसलिए अनुभवी प्रशासकों की सलाह से उन्होंने दूसरा उपाय निकाला। पृथ्वी नारायण शाह ने दरभंगा में रहे अंग्रेजी अफसर मेजर केली के पास दीनानाथ उपाध्याय को ईस्वी १७७०-७१ पुस में भेजा। उसने वहाँ गोरखालियों की तरफ से प्रस्ताव रखा—“नवाब-वजीर के समय से तराई क्षेत्र के मालवाजवी के रूप में जितनी चीजें या राशी मकवानपुर के राजा मुग़ल बादशाहों को देते आए थे, उतनी ही चीजें या राशी हम देने के लिए तैयार हैं।” उस शर्त पर मकवानपुर की तराई की भूमि पर मकवानपुर के मधेशी राजा के बदले उन्हें जमीन्दारी देने के लिए गोरखालियों ने आग्रह किया। यह प्रस्ताव मेजर केली द्वारा कलकत्ता में रहे अंग्रेज



गवर्नर-जनरल कार्टियर तक पहुँचाया गया।

अंग्रेज व्यापार के लिए नेपाल घाटी होकर तिब्बत तक जाने का रास्ता तलाश कर रहे थे। उसके लिए वे वर्षों से प्रयत्नशील थे। उस समय तक, नेपाल घाटी पर गोरखालियों का आधिपत्य हो चुका था। अंग्रेजों के लिए नेपाल को खुश करके तिब्बत तक का रास्ता खुलवाने का वह स्वर्णिम अवसर था। और फिर अंग्रेजों को चाहिए क्या? चाहे मधेशी सेन राजा मालवाजवी उठा कर दे या गोरखाली, उसे क्या फर्क पड़ता? इसलिए गवर्नर कार्टियर ने वह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया।

मालवाजवी के सम्बन्ध में, मेजर केली और नेपाल के प्रतिनिधि दीनानाथ उपाध्याय के बीच में पटना में कुछ दिन तक विचार-विमर्श होता रहा। अन्ततः पुराने कागज़ात मुताबिक चौदह हाथ खड़े दो हाथी देने की सहमति हुई, जैसा कि मकवानपुर के सेन राजा देते आए थे।

उसके बाद तीन वर्ष तक नेपाल सरकार मालवाजवी स्वरूप कम्पनी सरकार को चौदह हाथ खड़े दो हाथी देती रही। पर वैसा हाथी जंगलों में मिलना मुश्किल हो गया था। इसलिए बाद में साढ़े बारह हाथ खड़े हाथी ही भेजे जाने लगे। उस पर अंग्रेज चिढ़ गए और उन्होंने मधेश के राज्य किसी और को देने की धमकी भी दी। पर मुग़ल प्रशासक नवाब-वजीर महावतजंग और मकवानपुर राज्य के प्रतिनिधि राम नारायण के बीच में ऐसे ही समझौता हुआ था कि चौदह हाथ का हाथी नहीं मिलने पर कम-से-कम साढ़े बारह हाथ का हाथी दिया जाएगा। उसी को आधार मानते हुए पटना में रहे अंग्रेजी अफ़सर जार्ज वेन्सिटार्ट ने हरेक वर्ष उसी नाप के हाथी उपलब्ध कराने के लिए नया समझौता कर दिया। इस तरह से बारागढ़ी/मकवानपुरगढ़ी राज्य की तराई के भोग-चलन का पट्टा अंग्रेजों द्वारा गोरखाली जमीन्दार को दिया गया।

मकवानपुर पर नेपाली/गोरखाली आक्रमण के कुछ महीने बाद, ईस्वी १७७२-७३ की तरफ कर्णसेन मधेश के अम्बरपुर/चौदण्डी (सिरहा, सप्तरी और उदयपुर जिले) के साथ-साथ मोरंग/विजयपुर (सुन्सरी, मोरंग और झापा जिले) के भी राजा थे। मधेश के पूर्वी क्षेत्र पर भी गोरखालियों की आँखें तो गड़ी हुई ही थीं, पर गोरखाली शासक कर्णसेन से चिढ़े हुए भी थे। कर्णसेन ने नेपाल के राजा जयप्रकाश मल्ल को सैन्य सहायता भेजकर गोरखालियों को शत्रु बना लिया था।

आखिर में, गोरखालियों ने चौदण्डी पर आक्रमण कर ही दिया, पर पूर्वी मधेश भी अंग्रेजों के संरक्षण के राज्य थे। अंग्रेजों से लड़ने की हिम्मत गोरखालियों में नहीं थी। इसलिए



अंग्रेजों के कोप से बचने पृथ्वी नारायण शाह ने अंग्रेज गवर्नर जनरल वारेन हेस्टिंग्स को पत्र लिखा—“अम्बरपुर और विजयपुर राज्य के तराई क्षेत्र के मालवाजवी के रूप में उन राज्यों के राजा कम्पनी सरकार को जितनी रकम या वस्तु देते आ रहे हैं, उतनी ही रकम या वस्तु मैं भी आपको देने के लिए तैयार हूँ; उन राज्यों के राजाओं के बदले मेरे नाम पर भोग-चलन के अधिकार के लिए पट्टा कर देने के लिए हार्दिक विनती करता हूँ।” उस पत्र के साथ उन्होंने अपने दो दूत श्रीहर्ष मिश्र और बृहस्पति उपाध्याय को कम्पनी सरकार की राजधानी कलकत्ता की ओर भेजा।

उधर आक्रमण के बाद अंग्रेजी अफसर मिस्टर पिकाक राजा कर्णसेन को सैनिक सहायता भेजने के लिए गवर्नर जनरल वारेन हेस्टिंग्स के नाम सिफारिश भेज रहे थे। पर दुर्भाग्य से ईस्वी १७७४ में राजा कर्णसेन की अचानक मौत

हो गई। उनका केवल एक पाँच वर्ष का बेटा था। वही मधेश के राज्य का उत्तराधिकारी था। विधवा रानी अपने नाबालिग बेटे को लेकर नाथपुर में ठहरिं। वह बच्चा जीवित रहते अंग्रेज मधेश के पूर्वी क्षेत्र की जमीन्दारी नहीं देंगे, ऐसा नेपाल के राजा पृथ्वी नारायण शाह ने सोचा। इसलिए पृथ्वी नारायण शाह ने उस बच्चा को मारने के लिए एक ब्राह्मण को भेजा। उसने राजा कर्णसेन के पाँच वर्ष के पुत्र पर विष प्रयोग करके उसको षड्यन्त्रपूर्वक मार डाला। उसके बाद, अम्बरपुर-मोरंग की राजगद्दी पर बैठने वाला कोई न होने से अंग्रेज असमंजस में पड़ गए।

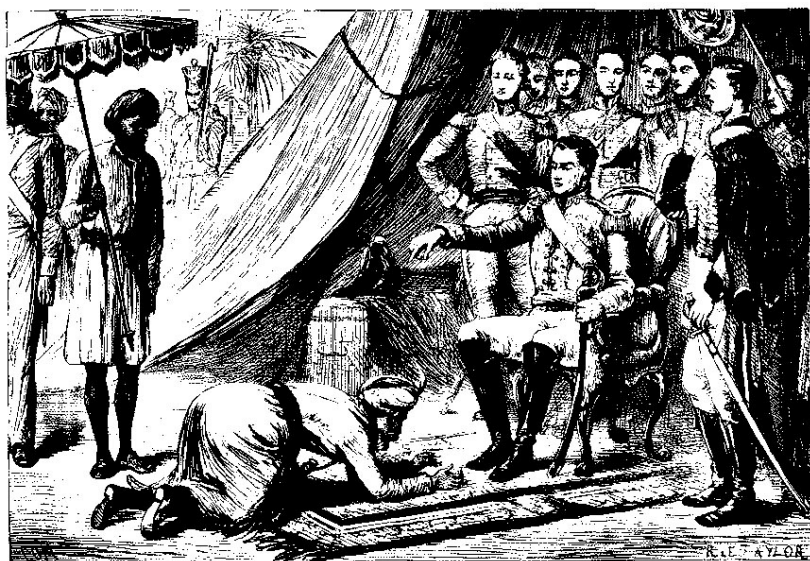
नेपाल के राजा का प्रस्ताव कम्पनी सरकार के गवर्निंग काउन्सिल में प्रस्तुत किया गया। वहाँ पर कहा गया कि पश्चिम हरिद्वार से लेकर पूरब में दिनाजपुर तक लूटपाट करने वाले हथियारधारी नागा-वैरागियों को अंग्रेजी राज्य में आने के लिए अगर नेपाली रोकते हैं, तो उनकी माँगों पर विचार किया जा सकता है।

पर अम्बरपुर और मोरंग की समस्या यथावत् ही रही। अभिमानसिंह के नेतृत्व में पूर्वी मोर्चे पर रहे नेपाली सैनिक डेढ़ वर्ष से वहीं पर इन्तजार कर रहे थे।



ई. १८१४-१६ की लड़ाई

मधेश के कुछ क्षेत्र अंग्रेजों से जमीन्दारी के रूप में लेने के बाद, नेपाली सैनिक अंग्रेजों के अधिकार में रहे इलाकों में अनधिकृत रूप में कभी-कभी घुस जाते। अंग्रेज दक्षिण भारत के युद्ध में उलझे रहने के कारण इन छोटी-मोटी बातों पर ध्यान नहीं दे पा रहे थे। कभी-कभी ध्यान पड़ने पर अंग्रेज अपनी फौज भेजते तो नेपाली सैनिक भाग खड़े होते थे। लेकिन जैसे अंग्रेजी फौज वापस चली जाती, नेपाली सैनिक फिर से अंग्रेज आधिपत्य के क्षेत्रों में आ जाते। उस तरह के झमेला नेपाली सैनिक मधेश में पूरब से पश्चिम बहुत जगहों



तस्वीर: नेपाल के दूत अंग्रेजी जनरल ऑक्टरलोनी के शिविर में

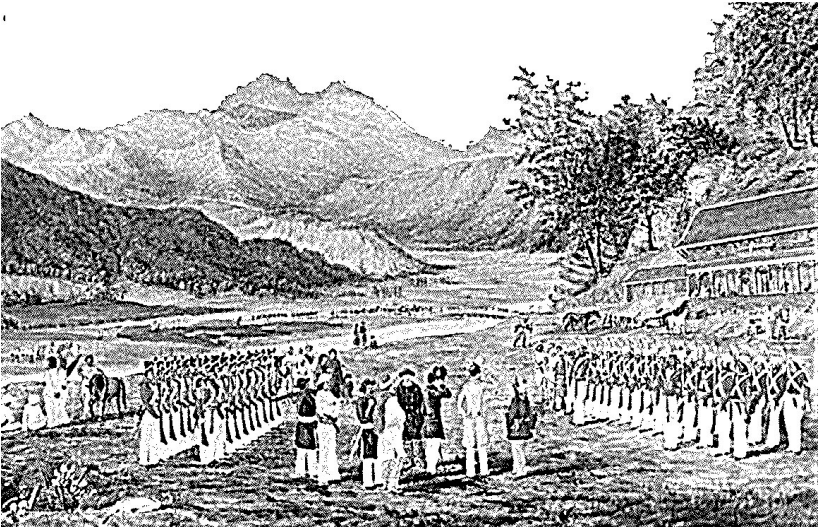
पर कर रहे थे। उसी को लेकर अंग्रेज और नेपाल के बीच में झगड़ा हुआ। नव जमीन्दार नेपालियों के अतिक्रमण और अत्याचारों से मधेशी भी पीड़ित थे, और उनसे मुक्ति चाहते थे।

ईस्वी १८१४ नवम्बर १ तारीख को अन्ततः गवर्नर-जनरल लॉर्ड हेस्टिंग्स ने नेपाल से युद्ध की घोषणा कर दी। मुक्तिकामी मधेशियों ने अंग्रेजों का साथ दिया। कई मोर्चों पर युद्ध हुए। नेपाली सैनिक पराजित हुए। अंग्रेजी और देशी सैनिक मिलकर मधेश से नेपालियों को खदेड़ा। वे मकवानपुर पर कब्जा करते हुए, नेपाल (काठमाण्डू) पर कब्जा करने के लिए अग्रसर हुए। यह समाचार मिलते ही नेपाल के दरबार के लोगों के प्राण-पखेरू उड़ने लगे। पराजित नेपालियों ने अंत में अंग्रेजों से सुगौली संधि की। उसके अनुसार मधेश में नेपालियों की जमीन्दारी भी समाप्त हुई। नेपाल में अंग्रेजी रेजिडेंट भी रखा गया और अंग्रेजों के अप्रत्यक्ष शासन की शुरुआत हुई।



ई. १८१६ का विश्वासघात

ईस्वी १८१६ में मधेश कम्पनी सरकार के पूर्ण-आधिपत्य में आने के बाद, वहाँ से मालपोत और कर उठाने का काम अंग्रेजों का था। पर अंग्रेजों को वहाँ से कर उठाने में बहुत ही मुश्किल हो रही थी। इसलिए मधेश से कर उठाकर देने वाले आदमियों की तलाश में अंग्रेज लगे हुए थे। बारागढ़ी और मोरंग के सेन राजाओं के उत्तराधिकारी समाप्त हो चुके थे। उस कठिन परिस्थिति में अंग्रेजों ने एक तरकीब निकाली। सुगौली संधि के अनुसार प्रति वर्ष दो लाख रुपये की राशी कम्पनी सरकार नेपाल के अधिकारियों की जीविका चलाने के लिए नेपाल को देती थी। उसके बदले, मधेश की भूमि से



कर उठाकर वह रकम हासिल करने की जिम्मेवारी नेपाल को देने का फैसला अंग्रेजों ने किया। इससे अंग्रेजों के दोनों काम निपटने वाले थे। मधेश से कर उठाने की झंझट से कम्पनी सरकार मुक्त हो जाती, तो दूसरी ओर कम्पनी सरकार को नेपाल को दो लाख रुपये सालाना देना भी नहीं पड़ता।

इसी बात पर विचार करते हुए, ईस्वी १८१६ दिसम्बर ८ तारीख को अंग्रेजों ने नेपाल से एक संधि की। उसके अनुसार नेपाल को सालाना दो-लाख रुपये देने के बदले, कोशी नदी से लेकर राप्ती नदी तक के मधेश के भू-भाग अंग्रेजों ने नेपाल को सौंप दिया। इस तरह से पूर्वी मधेश नेपाली साम्राज्य के मातहत में आ गया और नेपाल का उपनिवेश बन गया।

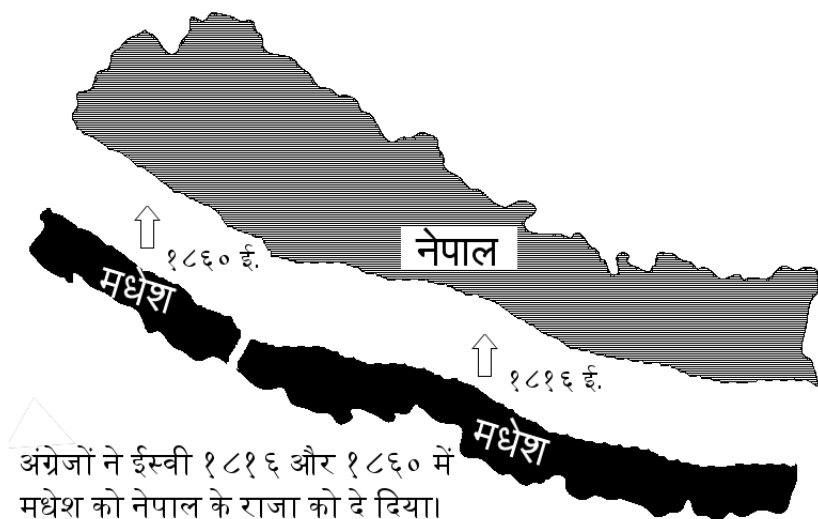
अंग्रेजों का वह कदम मधेशियों के साथ विश्वासघात था। मधेशी लोग नेपालियों के विरुद्ध लड़े थे, और नेपालियों के कट्टर दुश्मन थे। पर अंग्रेजों ने उन्हीं के हाथों में मधेशी और मधेश को सौंप दिया। पर मधेशियों के बचाव के लिए अंग्रेजों ने थोड़ी सावधानी ज़रूर की थी। संधि की शर्तों में लिखा गया था कि नेपाल के साथ के युद्ध में अंग्रेजों की मदद करने के बदले मधेशियों को नेपाल के राजा कभी दण्ड नहीं देंगे।



ई. १८६० का पुरस्कार

१९वीं सदी के मध्य में अंग्रेजों के अत्याचार से भारत की जनता तड़प रही थी। उस कारण से ईस्वी १८५७-६० के दौरान भारत में सिपाहियों ने भी विद्रोह कर दिया था। उस विद्रोह को दबाने के लिए नेपाल के शासकों ने अंग्रेजों की मदद की। नेपाली सेना ने भारत में भारतीय जनता का दमन किया, और विद्रोह को दबाने में अंग्रेजों की सहायता की।

उससे खुश होकर ईस्वी १८६० नवम्बर १ तारीख को नेपाल और कम्पनी सरकार के बीच एक संधि सम्पन्न हुई। सिपाही विद्रोह को दबाने के लिए नेपाल ने किए सैन्य सहयोग तथा युद्ध के खर्च के बदले अंग्रेजों ने पश्चिम मधेश के



भू-भाग नेपाल के राजा को पुरस्कार स्वरूप दे दिया। बाँके, बर्दिया, कैलाली और कंचनपुर जिले उस क्षेत्र में पड़ते हैं। नेपाली साम्राज्य में नए-नए जोड़े जाने के कारण इस क्षेत्र को 'नया मुल्क' भी कहा जाता है।



आजादी आन्दोलन के मधेशी वीर

अंग्रेजों के द्वारा मधेश की भूमि नेपाल को सौंपे जाने पर मधेशी अंग्रेजों से असंतुष्ट थे। उधर अंग्रेजों के अत्याचार से मुक्ति पाने के लिए भारत में आजादी आन्दोलन चल रहा था। ईस्वी १९४२ के दौरान हिन्दूस्तान में अंग्रेजों के खिलाफ 'भारत छोड़ो' आन्दोलन चल रहा था। सुभाष चन्द्र बोस ने 'आज़ाद हिन्द फ़ौज' का भी गठन किया गया था। भारतीय स्वतन्त्रता क्रान्ति में कई मधेशी हिस्सा ले रहे थे।

मधेशी लोग भारतीय क्रान्तिकारियों की मदद भी कर रहे



थे। मधेश के सीमा-क्षेत्र के लगभग हरेक गाँव में भारतीय क्रान्तिकारी आश्रय लिए हुए थे। उस क्रम में नेपाल सरकार ने कई मधेशियों पर कार्रवाई भी की। भारत के आन्दोलन का केवल चर्चा करने के जुर्म में थारू समाज में सबसे पहले स्यातक करने वाले महिकरदेव नारायण और रौतहट गौर स्कूल के प्रधानाध्यापक ब्रजकान्त ठाकुर को नेपाल सरकार ने नौकरी से हटा दिया। फिर भी मधेशी पीछे ना हटे, और वे भारतीय आजादी आन्दोलन में भाग लेते रहे।

अंग्रेजों से लड़ने के लिए, मधेशियों ने सप्तरी जिले में 'आज़ाद दस्ता' का प्रशिक्षण भी दे रखा था। उसका नेतृत्व सरदार नित्यानंद सिंह कर रहे थे।

'भारत छोड़ो' आन्दोलन के दौरान भारतीय नेता जय प्रकाश नारायण और राम मनोहर लोहिया लगायत के लोग सप्तरी में आश्रय लिए हुए थे। वे भारत की हज़ारीबाग़ जेल से भागकर आए थे। उनकी खोज भारत के कोने-कोने में हो रही थी। अंग्रेजों ने नेपाल सरकार को भी उन्हें नेपाल में तलाशने और पकड़ने के लिए कहा। नेपाल सरकार ने मधेश में व्यापक खोज-तलाशी और धरपकड़ शुरू कर दिया। इसलिए मधेशी क्रान्तिकारियों ने भारतीय नेताओं को कोशी नदी के पूर्व में रहे बोकरो टापू पर छिपाकर रखा। पर नेपाल सरकार को किसी तरह पता चल गया। नेपाली फौज ने उस टापू को घेर कर भारतीय नेताओं को कैद करके हनुमाननगर जेल में बन्द कर दिया। इससे पूरे नेपाली साम्राज्य में सनसनी फैल गई।

पर मधेश के वीरों ने उन सबको वहाँ से जेल तोड़कर छुड़ाया। रात को १० बजे कोइलाडी-बर्साइन के राजपूतों की अगुआई में मधेशी जनता की एक बड़ी तादाद ने हनुमाननगर जेल को घेरा। क्रान्तिकारियों ने जेल में आग लगा दी। वहाँ



पर मधेशी क्रान्तिकारियों को गोली भी चलानी पड़ी। उससे एक हवलदार की मृत्यु हो गई। जय प्रकाश नारायण सहित के नेताओं को छुड़ाकर हजारों की संख्या में मधेशी जयजयकार करते हुए उन्हें भारतीय सीमा तक छोड़ आए।

इस घटना के कारण नेपाल सरकार मधेशियों से क्रुद्ध हो गई। बड़ाहाकिम ने पूरे सप्तरी में आतंक की स्थिति पैदा कर दी। नेपाल सरकार अपना क्रोध निर्दोष आदमियों पर निकालने लगी। “सप्तरी के कोई भी प्रतिष्ठित लोग, जमीन्दार, गृहस्थ, साहू, महाजन और किसान लज्जित होने से नहीं बच सके। अफ़सर किसी को भी गिरफ्तार करने का आदेश दे देते थे। सैनिक हरेक दिन किसी न किसी गाँव पर छापा मारते थे, दो-चार आदमियों को गिरफ्तार करके लाते थे, और उन्हें खुली जगहों पर चाबुक से पिटवाते थे। इस किस्म की स्थिति महीनों तक कायम रही। उसमें उक्त घटना में संलग्न न रहे कई आदमी गिरफ्तार हुए और शारीरिक

और मानसिक यातनाएँ भोगने के लिए मजबूर हुए, तो कई लोगों को गाँव छोड़के भागकर बचना पड़ा।” इस घटना के पश्चात् मधेशियों को नेपाल सरकार और भी विद्रोही के रूप में देखने लगी।

अन्त में सप्तरी के १५०-२०० मधेशियों पर नेपाल सरकार ने कार्रवाई की। बाइस आदमियों को कैद करके काठमाण्डू लाया गया। उनमें से अब्दुल मियाँ और कृष्णवीर कामी की जेल में ही मृत्यु हो गई। चतुरानंद सिंह, जय मंगल प्रसाद सिंह सहित के लोगों को महात्मा गांधी के आग्रह पर बाद में रिहा किया गया।



वीरगंज के वीर

नेपाल सरकार के अत्याचारों से पीड़ित मधेशियों ने २००७ साल में क्रान्ति शुरू कर दी। सरकारी फौज से लड़ने के लिए मुक्ति सेना खड़ी की गई। मुक्ति सेना एक-एक करके विराटनगर, वीरगंज और भैरहवा कब्जा करने में लगी थी।

वीरगंज पर कब्जा होने पर वहाँ जनसरकार बनाई गई। उसके बाद मुक्ति सेना वीरगंज से पाँच मील उत्तर परवानीपुर के पास सरकारी फौज से लड़ी। अगहन ४ गते तक जैसे-तैसे मुक्ति सेना ने सरकारी फौज को रोका। पर अन्ततः गोली की कमी के कारण मुक्ति सेना परवानीपुर से पश्चिम की ओर चली गई। वीरगंज में यह खबर मिलने के बाद ५ गते भागामभाग मच गई। दोपहर तक भी कोई सरकारी फौज दिखाई न देने पर लोग धीरे-धीरे शहर में वापस आने लगे। पर लगभग दो बजे दोपहर को पश्चिम और उत्तर की तरफ से गोली की वर्षा होने लगी। सरकारी फौज ने वीरगंज को चारों ओर से घेर लिया था। नेपाली सरकारी फौज ने वीरगंज पर भयानक आक्रमण और दमन किया। अनेकों बेकसूर लोग गोली और खुकुरी के प्रहार से मारे गए। लगभग एक हजार लोगों को भयंकर कारा-कष्ट भोगना पड़ा।



रौतहट के वीर मधेशी किसान

२००७ साल की क्रान्ति के दौरान वीरगंज पर मुक्ति सेना का कब्जा होने पर गौर के किसानों में नया उत्साह छा गया। परन्तु वहाँ पर मुक्ति सेना का कोई दल नहीं आया था। स्थानीय मधेशी किसान ही अगहन ३ गते लगभग दस हजार की संख्या में जुलूस निकालकर बजार-अड्डा की ओर बढ़े। वहाँ सशस्त्र सैनिकों का पहरा था। उन्होंने जुलूस को अमीनी-कचहरी की ओर बढ़ने दिया। इस तरह से मधेशी किसानों के जुलूस को घेरने के बाद, नेपाली सेना मधेशी किसानों पर अन्धाधुन्ध गोली बरसानी शुरू कर दी। उसमें नेता शिव प्रसाद सिंह, रति संयासी, नन्दू साह सहित १५-२० मधेशी वहीं पर शहीद हो गए। उसके अलावा लगभग सौ लोग बहुत ही बुरी तरह से घायल हुए। उस घटना की तुलना 'जालियाँवाला बाग' से की जाती है।



विराटनगर के वीर

२००७ साल की क्रान्ति चल रही थी। मुक्ति सेना मधेश के शहरों पर कब्जा करने में लगी थी। कार्तिक २७ गते मध्यरात में चार-पाँच स्टेनगन, चार-पाँच रिवाल्वर और कुछ हथगोले लेकर मुक्ति सेना ने विराटनगर पर आक्रमण किया। इस दल में डा. कुलदीप झा, गिरिजा प्रसाद कोइराला आदि मौजूद थे। इससे विराटनगर के अधिकांश भागों पर कब्जा हुआ। पर बड़ाहाकिम के घर पर कब्जा नहीं हो सका। उधर धनकुटा से सरकारी फौज मोरंग आ रही थी। इस बीच में मुक्ति सेना ने रंगेली पर भी कब्जा किया।

अगहन मध्य तक में भी बड़ाहाकिम के घर पर कब्जा नहीं हो पाया था। बाद में एक ट्रैक्टर को जूट मिल में ले जाकर ट्यांक का रूप दिया गया। उसे चलाकर मुक्ति सेना ने बड़ाहाकिम का घर भी कब्जे में ले लिया।



विराटनगर पर दूसरा आक्रमण होते ही वीरगंज से सरकारी फौज का एक दल महोत्तरी और सप्तरी होते हुए विराटनगर पहुँचने निकल पड़ा था। मुक्ति सेना ने उसे कोशी नदी के पार ही रोकने की योजना बनाई। उसके लिए डा. कुलदीप झा के नेतृत्व में विराटनगर से मुक्ति सेना का दल कोशी की तरफ भेज दिया गया। पुस १४ गते सुन्सरी के कुशहा युद्धगंज के पास दोनों पक्षों में घमासान युद्ध हुआ। उस युद्ध में डा. कुलदीप झा शहीद हुए। बाद में पुस १९ गते मुक्ति सेना ने सरकारी फौज को कोशी इलाके में घेर लिया। वहाँ सरकारी फौज को आत्मसमर्पण करना पड़ा।



बेलुवा के वीर

पश्चिम मधेश में नेपाली जमीन्दारों से मधेशी लोग बहुत ही पीड़ित थे। पहाड़ से आकर मधेश में बस गए नेपालियों ने आदिवासी थारुओं की जमीन हथियाकर उन्हें कमैया (गुलाम) बना दिया था। कमैया लोगों को नेपाली जमीन्दारों के यहाँ काम करना पड़ता था, पर उन्हें कोई मजदूरी तक भी नहीं मिलती थी। अपनी मजदूरी के बदले फसल से एक-तिहाई (त्रिकुर) देने के लिए कमैया ने जमीन्दारों से बहुत विनती की। पर जमीन्दारों ने उन्हें त्रिकुर देने से इन्कार किया।



अन्त में उन अत्याचारों से पीड़ित कमैया लोगों ने खेतों और खलिहानों पर कब्जा करने की योजना बनाई। उनका उद्देश्य त्रिकुर लेना था। २००८ साल बैसाख १४ गते बर्दिया जिले के मानपुर टपरा के बेलुवा में बच्चों और महिलाओं के साथ लगभग १३०० थारू कमैया लोग खलिहानों पर कब्जा करने के लिए आगे बढ़े। लगभग ४ बजे खलिहानों पर कब्जा करके अपना हिस्सा वे बोरी में भरने लगे। पर नेपाली पुलिस वहाँ पहुँचकर उन निहत्थों पर अन्धाधुन्ध गोली बरसाने लगी। पुलिस की गोली से कोईली थरूनी, पतिराम थारू, लक्ष्मी थारू, डिबूवा थारू, चपु थारू और सोलरिया थारू वहीं पर शहीद हो गए। पुलिस द्वारा बलपूर्वक कमैया लोगों को आत्मसमर्पण कराया गया। अपने मालिक के यहाँ काम करने के लिए लौटने पर कमैया लोगों को नेपाली पुलिस ने मजबूर किया।



शहीद दुर्गानन्द झा

२०१७ साल पुस १ गते नेपाल के राजा महेन्द्र ने संसद को भंग करके नेपाली साम्राज्य में निरंकुश शासन शुरू कर दिया। उस तानाशाही व्यवस्था से मधेश में त्राहि-त्राहि मच गई। उसी बीच २०१८ साल माघ ९ गते राजा महेन्द्र पूर्वी मधेश के दौरे में जनकपुर आए। वहाँ पर १८ वर्ष के मधेशी युवा दुर्गानन्द झा ने राजा सवार गाड़ी पर बम बिष्फोट कर दिया। गाड़ी क्षतिग्रस्त हो गई, पर राजा बाल-बाल बच गए।



दुर्गानन्द झा शहीद भगत सिंह से प्रेरित थे। वे धनुषा जटही के निवासी थे। जयनगर से जनकपुर आते समय परवाहा रेलवे स्टेशन पर उन्हें नेपाली सरकारी फौज ने पकड़ा। अगले दिन परकौली स्थित सैनिक बैरक से हेलिकाप्टर द्वारा काठमाण्डू लाया। २०२० साल माघ १५ गते उन्हें नेपाल सरकार ने मौत की सजा दी।



मधेश मुक्ति आन्दोलन के वीर



२०१८ साल के दौरान मधेशियों के अधिकार के लिए मधेश मुक्ति मोर्चा का गठन हुआ। मधेशियों का औपनिवेशिक शोषण अन्त करने के लिए मोर्चा ने छापामार युद्ध संचालन करने का निर्णय किया।

पर नेपाल सरकार बुरी तरह से उस आन्दोलन का दमन करने लगी। मोर्चा से जुड़े कार्यकर्ताओं और नेताओं को सरकार एक-एक करके खत्म करने लगी। उस क्रम में नेपाल सरकार द्वारा नारायण झा, श्यामलाल मिश्र, देवकीनन्दन गुप्ता, परमहंस यादव सहित के लोगों को बुरी तरह से दण्डित किया गया।

नेपाल पुलिस ने मोर्चा के नेता रामजी मिश्र को २०२० साल आषाढ़ में मार डाला। उसके बाद शाही नेपाली सेना ने मोर्चा के प्रमुख रघुनाथ राय को भी रूपन्देही के भैरहवा के

पास के भारतीय बाजार नौतनवा से अपहरण करके नेपाली भूमि पर लाकर गोली मार दी। उसी तरह, २०२४ साल भादो में नेपाल सरकार ने भाड़े के गुण्डे को लगाकर मोर्चा के सभापति सत्यदेवमणि त्रिपाठी को भी मार दिया।

उधर मधेश मुक्ति आन्दोलन से जुड़े मोरंग कटहरी के शनिश्चर चौधरी को पुलिस द्वारा पकड़े जाने की सूचना मिलने पर उन्होंने अपनी पत्नी को गोली मारकर खुद को भी गोली मार ली।



शहीद वीरेन राजवंशी

भारत में शुरू हुए नक्सलवादी आन्दोलन का प्रभाव पूर्वी मधेश के झापा, मोरंग आदि जिलों में भी पड़ा था। नेपाल में सरकार भूमिसुधार नीति लाकर जमीन्दारों का ही पक्षपोषण कर रही थी। झापा में बहुत बड़ी तादाद में नेपाली शासक वर्ग के लोग पहाड़ से आकर बस गए थे। वे स्थानीय मधेशी आदिवासियों की जमीन पर कब्जा करके जमीन्दार बनकर मधेशियों का शोषण कर रहे थे।

इस कारण से कुछ समूहों ने झापा में जमीन्दारों के खिलाफ वर्गीय आन्दोलन छेड़ दिया। नेपाल सरकार द्वारा बुरी तरह से उसका दमन किया गया। आन्दोलन का नेतृत्व कर रहे वीरेन राजवंशी सहित के नेताओं को नेपाल सरकार ने गिरफ्तार कर लिया। २०२९ साल फागुन २१ गते सुखानी जंगल में ले जाकर वीरेन राजवंशी को नेपाल सरकार ने गोली मार दी।



रघुनाथ ठाकुर

रघुनाथ ठाकुर २०१४-१५

साल से ही संगठित रूप से अहिंसात्मक मधेश मुक्ति आन्दोलन चला रहे थे। वे संयुक्त राष्ट्र संघ के चार्टर के अनुच्छेद ११ की धारा ७३ के अनुसार मधेश को अस्वशासित अर्थात् परतन्त्र क्षेत्र मानते थे। वे मधेश की भूमि पर शासन के लिए जनमत संग्रह कराने के

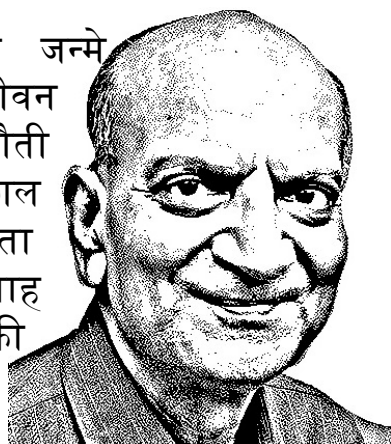


पक्ष में थे। उनका कहना था कि मधेश की भूमि मधेशियों का है और उस पर निर्णय करने का अधिकार सिर्फ मधेशियों के पास है। बाद में उन्होंने 'मधेश जनक्रान्तिकारी दल' का गठन किया। नेपाल सरकार ने उनके खिलाफ दमनकारी नीति ली। इसलिए अधिकांश समय उन्हें भारत में निर्वासित होकर ही बिताना पड़ा।

वे दिन के उजाले में पेट्रोमैक्स जलाकर अपने माथे पर रखकर भारत के संसद भवन आगे घूमते रहते थे। एक बार भारतीय नेता आचार्य कृपलानी सहित दूसरे सांसदों ने उन्हें इसका कारण पूछा। उन्होंने जवाब दिया—“न्याय नेपाल और भारत से कहीं खो गया है, मैं इस पेट्रोमैक्स की सहायता से उसे ही तलाश कर रहा हूँ।”

रामराजा प्रसाद सिंह

सप्तरी के कोइलाडी में जन्मे रामराजा प्रसाद सिंह आजीवन नेपाल के राजाओं को चुनौती देते रहे। अपने पिता जय मंगल सिंह के द्वारा भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन के नेताओं को पनाह देने के जुर्म में वे सात वर्ष की उम्र में ही अपने पिता के साथ जेल गए।



रामराजा प्रसाद सिंह २०२४ साल में स्नातक निर्वाचन क्षेत्र से राष्ट्रीय पंचायत में निर्वाचित हुए थे। पर नेपाल की निरंकुश व्यवस्था के विरोध में आवाज़ उठाने के जुर्म में उन्हें छह महीने तक जेल में बन्द किया गया। २०२८ साल में वे पुनः स्नातक निर्वाचन क्षेत्र से ही चुनाव लड़कर निर्वाचित हुए। पर नेपाल सरकार ने उन्हें शपथ ग्रहण करने नहीं दिया और गिरफ्तार करके जेल भेज दिया। अन्तरराष्ट्रीय जगत में उस असंवैधानिक कदम की बहुत चर्चा-परिचर्चा हुई। परिणामस्वरूप नेपाल के राजा महेन्द्र ने रामराजा प्रसाद सिंह को पद-प्रतिष्ठा का बहुत लोभ-लालच दिखाया, सारे हथकण्डे इस्तेमाल किए। पर रामराजा प्रसाद सिंह राजा के जाल में नहीं फँसे। अन्ततः उन्हें जेल से रिहा करना ही पड़ा।

बाहर आकर उन्होंने अहिंसात्मक क्रान्ति की शुरुआत

आमसभा करके और जुलूस निकालकर की। उसी क्रम में २०२८ साल में राजविराज की आमसभा में पुलिस ने रामराजा प्रसाद सिंह, रामेश्वर प्रसाद सिंह, लक्ष्मण प्रसाद सिंह, हिम्मत सिंह, शत्रुघ्न सिंह आदि लोगों को निर्ममतापूर्वक पीटा। विराटनगर के कार्यक्रम पश्चात् रामराजा प्रसाद सिंह को गिरफ्तार करके चार वर्ष के लिए काठमाण्डू की जेल में बन्द कर दिया। उसके बाद वे वहीं से सशस्त्र क्रान्ति की योजना बनाने लगे। उसके लिए उन्होंने अपनी पत्नी के गहने-जेवर तक बेच डाले।

२०४२ साल आषाढ ६ गते नेपाल के राजा के शासन का विरोध करते हुए रामराजा प्रसाद सिंह ने एक साथ ही काठमाण्डू में कई जगहों पर बम धमाके किए। काठमाण्डू में राजा रहते आए नारायणहिटी राजदरबार के दक्षिण गेट, सिंहदरबार के राष्ट्रीय पंचायत भवन और शाही परिवार के निवेश रहे होटल अन्नपूर्ण में बम विस्फोट हुए। उसके साथ-साथ भैरहवा विमानस्थल, वीरगंज, जनकपुर, विराटनगर और झापा में भी बम विस्फोट हुए। लगभग एक सौ बम बिन फटी अवस्था में पाए गए।

बम कांड के लिए नेपाल सरकार ने रामराजा प्रसाद सिंह को फाँसी की सजा सुनाई। पर वे भागने में सफल रहे। २०४३ साल में भारत में पकड़े जाने पर उसे श्रीलंका के एक टापू में ले जाकर छोड़ दिया गया, और भारत आने पर प्रतिबंधित किया गया।

रामराजा प्रसाद सिंह विश्व क्रान्तिनायक चे ग्वेभारा से मिले थे और उनसे प्रभावित थे।



शहीद मुनेश्वरी देवी यादव

नेपाल के निरंकुश पंचायती शासन काल में राजनैतिक पार्टियों पर प्रतिबन्ध लगा हुआ था। लोगों में नेपाल सरकार के प्रति व्यापक असंतोष था। पर नेपाली शासन व्यवस्था के विरोध में लोग बोल तक भी नहीं सकते थे।

नेपाल सरकार के उपर बढ़ते आक्रोश के चलते २०४६ साल फागुन ७ गते से जनआन्दोलन की घोषणा की गई। विद्यार्थी और पार्टी कार्यकर्ताओं के जुलूस यत्रतत्र निकलने लगे। पुलिस से जगह-जगह पर मुठभेड़ हुई। कुछ प्रदर्शनकारी



तस्वीर: मधेशी नेता गजेन्द्र नारायण सिंह पर काठमाण्डू में पुलिस का दमन

मारे गए और हजारों पकड़े गए। अधिकांश प्रमुख नेताओं को या तो कैद कर लिया गया या घर में ही नजरबन्द कर दिया गया।

उसी क्रम में २०४६ साल फागुन ९ गते धनुषा के यदुकुहा में मधेशी आन्दोलनकारियों पर पुलिस ने गोली बरसाई। नेपाल पुलिस के द्वारा शिवधारी यादव के घर पर गोली बरसाने से घर की छत की तीन धज्जी-धज्जी हो गई। वीर मधेशी महिलाओं ने नेपाली पुलिस का प्रतिकार किया। उसमें मुनेश्वरी देवी (तस्वीर में), जानकी देवी और सोनावती देवी शहीद हो गईं। उस तरह से घोर दमन करते हुए नेपाल सरकार आन्दोलन दबाने में लगी रही। पर अन्ततः नेपाल सरकार को झुकना ही पड़ा और राजनैतिक पार्टियों पर लगे प्रतिबन्ध को हटाया गया।



पाठ ३८
गजेन्द्र बाबू

गजेन्द्र बाबू ने अपने राजनैतिक जीवन की शुरुआत नेपाल के राणाशासकों से लड़ते हुए की। १८ वर्ष की उम्र में २००६ साल में वे पहली बार जेल गए। तब से लोकतन्त्र और समता के लिए संघर्ष करते रहे और उस दौरान कई बार जेल गए। उसी क्रम में २०१८ साल से २०३५ साल तक उन्हें भारत में निर्वासित



होकर रहना पड़ा। मधेशियों को अधिकार दिलाने के लिए उन्होंने २०४० साल में नेपाल सद्भावना परिषद का गठन किया। २०४७ साल बैसाख में उसे सद्भावना पार्टी बनाया।

२०४६ साल के आन्दोलन के बाद जब वे काठमाण्डू में मधेशियों की प्रथम आमसभा कर रहे थे, तब नेपालियों ने मधेशियों पर जमकर हमला कर दिया। नेपाली लोग मधेशियों पर ईंट-पत्थर बरसाने लगे। कई लोग घायल हुए। मधेशी लोग वहाँ पर सभा नहीं कर सके।

गजेन्द्र बाबू आजीवन मधेशियों को अधिकार दिलाने के लिए संघर्षरत रहे। उनकी मृत्यु २०५८ साल में हुई।

शहीद कमल गिरी

२०६३ साल अगहन में नेपाली शासकों ने नया अन्तरिम संविधान लागू कर दिया। उसमें मधेशियों की उपेक्षा किए जाने के कारण मधेशी लोग उसका विरोध कर रहे थे।

मधेशी लोग अपना अधिकार माँगते हुए नेपाली शासक वर्ग देख न सका। इसलिए मधेशी अधिकारकर्मियों पर नेपाली लोग जगह-जगह पर आक्रमण कर रहे थे। उसी क्रम में पुस ११ गते बाँके जिले के नेपालगंज में, नेपाली लोग 'देशी चोर नेपाल छोड़, देशी मुर्दाबाद' के नारे लगाते हुए



मधेशियों पर टूट पड़े। नेपालियों की भीड़ 'आज देशीलाई ठीक पार्नु पर्छ है' कहते हुए नेपालगंज बाजार घूमने लगी।

नेपालियों ने चुन-चुनकर मधेशियों की दुकान, घर, उद्योग और कार्यालयों में तोड़फोड़ की और आग लगा दी। नेपाली पुलिस नेपाली दंगाइयों का साथ दे रही थी। नेपाली दंगाइयों को उस तरह से दंगे के लिए हौसला, छूट और संरक्षण देने के कारण वे 'नेपाल प्रहरी, जिन्दावाद!' जैसे नारे लगा रहे थे। कई पुलिसवाले अपने चेहरे को रुमाल से ढककर लूटपाट मचा रहे थे। नेपाल पुलिस की गाड़ी नेपाली दंगाइयों को एक-जगह से दूसरी जगह लेकर आने-जाने का काम कर रही थी। उधर पुलिस मधेशियों पर अन्धाधुन्ध गोली भी बरसा रही थी। उसी क्रम में नेपाल पुलिस ने १६ वर्ष के कमल गिरी को गोली मार कर हत्या कर डाली।



शहीद रमेश महतो

नेपालगंज दंगे के बाद, २०६३ साल माघ महीने में मधेश में आन्दोलन शुरू हो गया। नेपाली शासन के विरोध में मधेश भर में जुलूस निकलने लगे। सारे बाजार बन्द किए गए। उसी क्रम में सिरहा जिले के लहान में भी भारी संख्या में मधेशी लोग सड़क पर उतर गए थे। क्या बच्चे क्या वृद्ध, सभी आन्दोलन करने निकल पड़े थे। पर माओवादियों ने उसका



विरोध किया। लहान में विवाद के क्रम में माओवादियों ने मधेशी आन्दोलनकारियों पर गोली चला दी और विद्यार्थी रमेश कुमार महतो की हत्या कर दी।

उनके बहते खून के साथ मधेशियों में आक्रोश फैल गया। आन्दोलन तुरन्त मधेश में पूरब से पश्चिम तक आग की तरह फैल गया। पर नेपाली शासक मधेशियों का दमन करने में लगे रहे। वे मधेशियों पर गोली बरसाते रहे। फिर भी मधेशी पीछे नहीं हटे। आन्दोलन के क्रम में नेपाली शासक ने कम-से-कम ३८ मधेशियों की हत्या कर दी। साथ में करीब ७०० लोग घायल हुए और २०० के अंग-भंग हुए।

शहीद मो. बिस्कुट मियाँ

२०६३ साल माघ महीने में मधेश में शुरू हुए आन्दोलन अगले वर्ष तक जारी ही रहा। नेपाली शासक मधेशियों को अधिकार देने के बदले दमन करने में लगे रहे। वे मधेशियों के साथ छल-कपट करने में लगे रहे। परिणामस्वरूप २०६४ साल माघ महीने में आन्दोलन ने फिर से उग्र रूप धारण कर लिया।

फागुन १ गते से संयुक्त लोकतान्त्रिक मधेशी मोर्चा द्वारा अनिश्चितकालीन बंद की घोषणा की गई। मधेश में हर जगह बाजार, शैक्षिक संस्थाएं, यातायात और कारखाने बंद रहने लगे। जगह-जगह पर जुलूस निकलने लगे। नेपाल पुलिस ने आन्दोलनकारियों का व्यापक दमन करना शुरू



कर दिया। दर्जनोँ लोग घायल हुए, सैकड़ों गिरफ्तार किए गए। मधेशियों को दबाने के लिए नेपाल सरकार ने यत्र-तत्र कर्फ्यू लगा दिया। मधेशी लोग कर्फ्यू को तोड़ते हुए सड़क पर आन्दोलन करते रहे। नेपाली पुलिस मधेशियों पर गोली बरसाती रही। कई मधेशियों ने अपने प्राणों की आहुति दी। उसी क्रम में, फागुन १५ गते सुन्सरी के दुहवी में मोहम्मद बिस्कुट मियाँ शहीद हो गए।

अन्ततः २०६४ साल फागुन १६ गते नेपाल सरकार और संयुक्त लोकतान्त्रिक मधेशी मोर्चा के बीच आठ-सूत्रीय समझौता हुआ। उसके अनुसार नेपाल सरकार मधेश को स्वायत्त संघीय राज्य बनाने के लिए राजी हुई।



शहीद धन बहादुर थारू

२०६९ साल बैसाख में नेपाली साम्राज्य के सुदूरपश्चिम में नेपालियों ने “अखण्ड सुदूरपश्चिम” के लिए आन्दोलन शुरू कर दिया। नेपाली लोग पहाड़ से कुछ वर्ष पहले ही मधेश के कैलाली कंचनपुर जिले में आकर बसे थे। उन्होंने स्थानीय थारू आदिवासियों की जमीनों पर कब्जा कर लिया था और थारूओं को कमैया, कमलरी और दास बना डाले थे। इसलिए मधेश की जमीन भी पहाड़ी क्षेत्र से जोड़े रखने के लिए नेपाली लोग “अखण्ड सुदूरपश्चिम” की माँग कर रहे थे। थारू आदिवासी लोग इसका विरोध कर रहे थे।

बैसाख के अन्तिम सप्ताह में नेपालियों और थारूओं के बीच कई जगहों पर भिड़न्त हुई। परिणामस्वरूप पूर्व मेची



से लेकर पश्चिम महाकाली तक की मधेशी जनता उठ पड़ी। इटहरी, नवलपरासी और महेन्द्रनगर में मधेशियों और नेपालियों के बीच टकराव हुआ। इसी बीच नवलपरासी के डण्डा में थारू प्रदर्शनकारियों पर नेपालियों ने आक्रमण कर दिया। नेपालियों ने थारू संग्रहालय पर भी आक्रमण करके धजियाँ उड़ा दीं, और संग्रहालय में आग लगा दी। नेपाल पुलिस मूक दर्शक बनकर देखती रही। इस तरह से थारूओं का नामोनिशान मिटाने के लिए नेपाल के शासक वर्ग और पुलिस प्रशासन सभी मिले हुए थे।

थारू संग्रहालय पर हुई तोड़फोड़ के विरोध में मधेशियों ने नवलपरासी बन्द किया। उस क्रम में थारू आन्दोलनकारियों पर नेपाल पुलिस ने व्यापक दमन किया। कावासोती (दण्डा) में नेपाल पुलिस ने अन्धाधुन्ध गोली चलाई। लगभग ५० आदमियों को पुलिस ने गोली मारकर गिराया। सात लोग मरणासन्न घायल हुए। घायलों में से धन बहादुर थनेत, तारा प्रसाद थनेत, महेन्द्र मगर, विशाल चौधरी और टेक बहादुर चौधरी थे। उसके बाद मधेशियों ने कैलाली में आमसभा की। उस क्रम में भी नेपालियों ने मधेशियों पर व्यापक आक्रमण किया। आमसभा के बाद घायलों से मिलने अस्पताल पहुँचे थारू नेताओं को नेपाली पुलिस ने अस्पताल में ही निर्ममतापूर्वक पिटा।

आन्दोलन के क्रम में नेपाल पुलिस की गोली से घायल हुए धन बहादुर थनेत (थारू) की जेठ २३ गते मृत्यु हो गई।



लेखक: डॉ. सी. के. राउत



सप्तरी जिले के महदेवा गाँव में जन्मे डॉ. सी. के. राउत, विलायत के कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी से पीएच. डी. किए हुए हैं। वे युवा इन्जिनियर पुरस्कार, महेन्द्र विद्याभूषण, कुलरत्न गोल्डमेडल, ट्रफिमेन्कफ एकाडेमिक एचिभमेन्ट अवार्ड जैसे सम्मानों से विभूषित हैं।

डॉ. राउत अमेरिका में वैज्ञानिक के रूप में कार्यरत थे। मधेश की सेवा करने के लिए वे २०६८ साल में अमेरिका से वापस लौट आए। उन्होंने 'मधेश का इतिहास' और 'वैराग से बचाव तक' (डिनायल टू डिफेन्स) किताबें भी लिखी हैं।

